International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9, Issue 5, May - 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

"२०१४ के लोकसभा चुनाव में साम्प्रदायिक ध्रुवीकरण"

प्रस्तुतकर्ता

शोध छात्र
हेमन्त कुमार रिछारिया
राजनीति विज्ञान विभाग
अतर्रा पी०जी० कॉलेज, अतर्रा
बांदा (उ०प्र०)
बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय झांसी

शोध निर्देशक
डॉ० राजीव रत्न द्विवेदी
एसो० प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष
राजनीति विज्ञान विभाग
अतर्रा पी०जी० कॉलेज, अतर्रा
बांदा (उ०प्र०)

भारत एक धर्मनिरपेक्ष देश होने के साथ-साथ एक बहुलतावादी देश है। जहाँ विभिन्न भाषाओं, संस्कृतियों, धर्मों और सम्प्रदाओं का अस्तित्व देखने को मिलता है। हमारे देश की सांस्कृतिक परम्परा "विभिन्नता में एकता" रही है। यहाँ की मिट्टी सामन्जस्य की एक सीख देती है।

भारत का संविधान सभी को धार्मिक स्वतन्त्रता प्रदान करता है। संविधान की मूल भावना यही है कि सभी लोग आपस में क्षेत्रीय-वर्गीय व धार्मिक विषमताओं के बाद भी आपस में भाईचारे एवं सामंजस्य से रहें। सरकार का यह दायित्व है कि वह ऐसे वातावरण को निर्मित करे जिसमें संविधान निर्माताओं का यह स्वप्न साकार हो सके।

लेकिन जब भी चुनाव आते हैं। हमारे देश के राजनैतिक परिवेश में साम्प्रदायिक कार्ड खेला जाने लगता है। साम्प्रदायिक सद्भाव को चुनौती दी जाने लगती है और राजनीतिक दल सत्ता की खातिर वोटों की राजनीति करने लगते हैं, धार्मिक आधार पर ध्रुवीकरण के प्रयास होते हैं और अक्सर इसमें वे सफल भी हो जाते हैं। वे यह भूल जाते हैं कि धर्म, सम्प्रदाय, जाति में समाज को बांटने से कुल मिलाकर देश को ही नुकसान होता है। मुझे किसी कवि की ये पंक्तियाँ याद आती हैं -

कब तक ये मजहवी समां बाँधियेगा,
ये उन्माद वाली हवा बाँटियेगा।
ये मन्दिर और मस्जिद गुरूद्वारे की रट में,
वतन ही न रहेगा तो क्या बाँटियेगा।।

२०१४ का लोकसभा चुनाव भारतीय राजनीति के लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण सिद्ध हुआ। इस चुनाव में साम्प्रदायिक ध्रुवीकरण की सारी सीमायें तोड़ दी गयीं। साम्प्रदायिक विभेद की जो ज्वाला इस चुनाव में उठी वो आज भी जारी है। मेरा शोध पत्र विशेष रूप से इसी मुद्दे पर केन्द्रित है।

साम्प्रदायिक समस्या की शुरूआत मुस्लिम युग से हुई। लेकिन पिछले कई सौ वर्षो से हिन्दु और मुसलमान साथ-साथ रहते आये हैं और उनमें काफी सामाजिक एवं सांस्कृतिक एकता पैदा हो गई थी। देश के स्वतंत्रता एवं बंटवारे के बाद भी एकता के ये बन्धन टूटे नहीं। साथ-साथ रहने से भाषा, साहित्य, इतिहास, संस्कृति और शिष्टाचार की उनमें एक सी परम्परा बनी। धर्म या मजहब का अन्तर होते हुये भी इस्लाम के ''सब मनुष्यों के भाईचारे'' और हिन्दू धर्म के ''सभी रास्ते एक ही मंजिल की ओर जाते हैं'' जैसे सिद्धान्तों के कारण यहाँ एक खास तरह की सहिष्णुता और मेलजोल पैदा हो गया था जो भारत की अपनी विशेषता है।

ब्रिटिश शासन से जहाँ भारत को कई लाभ पहुँचे वहाँ एक नुकसान यह हुआ कि उससे साम्प्रदायिकता को उत्तेजना मिली। इसमें ब्रिटिश राज, कांग्रेस और मुस्लिम व हिन्दू राजनेता सभी का समान दोष है। यह भी एक विचित्र विडम्बना है कि प्रतिनिधि और धर्मनिरपेक्ष शासन के जिस सिद्धान्त ने भारत में आधुनिकता का प्रचार किया उसी ने साम्प्रदायिक समस्या को भी उभारा।[१] आजादी से आज तक आमतौर पर साम्प्रदायिक माहौल हमेशा देश के किसी न किसी क्षेत्र में बना रहता है परन्तु चुनाव नजदीक आते ही इन घटनाओं में बढ़ोत्तरी होने लगती है। २०१४ के लोकसभा चुनाव नजदीक आते ही एकदम से साम्प्रदायिक घटनाओं की संख्या बढ़ने लगी। एक आंकड़े के अनुसार २०१२ से २०१३ तक देश में साम्प्रदायिक घटनाओं में २५ः की वृद्धि दर्ज की गयी। इन घटनाओं में सबसे ज्यादा योगदान उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, बिहार, कर्नाटक, गुजरात और राजस्थान का है। इन राज्यों में २०१२ में ४८८ साम्प्रदायिक घटनायें हुई वहीं २०१३ में इनकी संख्या बढ़कर ६७५ हो गयी।[२] प्रत्येक राजनीतिक दल अपने वोट बैंक के हिसाब से इन घटनाओं में सक्रिय रहकर कोई हिन्दू वोट तो कोई मुस्लिम वोट के ध्रुवीकरण का प्रयास करता है। आखिर क्यों इंसानी खून से वोटों की फसल खींचने की सियासी साजिश की जाती है? क्यों चुनाव नजदीक आते ही देश के साम्प्रदायिक सद्भाव को चुनौती दी जाने लगती है? क्या राजनीतिक दल सत्ता स्वार्थ में इतने अन्धे हो चुके हैं कि देश की एकता और अखण्डता भी सत्ता के आगे गौड़ हो चुकी है? ऐसे कई प्रश्नों के उत्तर भारतीय आमजन को अपनी मनः स्थिति में खोजने की आवश्यकता है, जो लोकतंत्र के लिये आवश्यक शर्त है। भारत में चुनावी राजनीति स्वभाव से ही बांटने वाली और जोड़-तोड़ पर टिकी है पर ऐसा लगता है कि साम्प्रदायिकता की जो राजनीति ९० के दशक के मध्य से आर्थिक वृद्धि और अन्य कार्यों में जुटे मध्य वर्ग के विस्तार के कारण हाशिये पर चली गयी थी वहीं विकराल रूप धारण कर वापस आ रही है। २०१४ लोकसभा चुनाव से पहले अपनी-अपनी राजनीतिक जमीन मजबूत करने के लिये छोटी-छोटी घटनाओं को बड़ा रूप प्रदान कर साम्प्रदायिक रंग में रंग दिया गया। २०१३ में असम से लेकर राजस्थान तक और जम्मू-कश्मीर से लेकर तमिलनाडु तक जगह-जगह झड़पें हुईं। इन सभी झड़पों का राजनैतिक मकसद था। २० अगस्त को मध्य प्रदेश के इन्दौर में जलधारा के पास मरा जानवर मिलने के बाद हिंसा भड़की और ३५ लोग घायल हो गये। असम के सिलचर में एक मन्दिर में मांस रखे जाने की अफवाह फैलते ही २५ अगस्त को हिंसा भड़क उठी जिसमें ३० लोग घायल हो गये। ९ अगस्त को जम्मू के किश्तवाड़ में ईद की नमाज के बाद कथित रूप से पाकिस्तान समर्थक नारे लगाने से हिंसा भड़की ३ मौतें हुईं और ६० लोग घायल हो गये। १० अगस्त को बिहार के नबादा में सड़क किनारे एक ढाबे पर दो गुटों के बीच झड़प के बाद दो लोग मारे गये। बिहार सरकार को कर्फ्यू लगाना पड़ा।

बिहार में दंगे की यह छः हफ्तों में छठी घटना थी।[३] इण्डिया टुडे २५ सितम्बर २०१३ में छपे एक लेख के अनुसार महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश और बिहार में मुस्लिम आबादी बड़ी है और साथ ही भाजपा की उपस्थिति मजबूत है। ऐसी स्थिति में कांग्रेस, सपा, बसपा, राजद एवं जद (यू) मुस्लिम समर्थक रूख अपनाते हैं। अतः किसी भी प्रकार से ध्रुवीकरण होने पर स्वतः हिन्दू वोट भाजपा एवं मुस्लिम वोट विरोधी दल के पक्ष में इकट्ठा हो जाता है।[४]

२०१४ के लोकसभा चुनाव के लिये जहाँ एक ओर सभी राजनीतिक दल कमर कस चुके थे। वहीं दूसरी ओर उत्तर प्रदेश के मुजफ्फरनगर दंगे ने देश को हिलाकर रख दिया। चुनाव पूर्व इन दंगों ने राजनीतिक दलों को अपनी-अपनी जमीन मजबूत करने का एवं विशेष सम्प्रदायों को अपनी ओर लामबन्द करने का मार्ग प्रशस्त कर दिया। फिर क्या था दलीय नेताओं द्वारा एक दूसरे पर आरोप-प्रत्यारोपों का दौर शुरू हुआ तो दिल्ली के सिंहासन का रास्ता सुगम करने वाला उत्तर प्रदेश साम्प्रदायिक राजनीति की प्रयोगशाला बन गया।

देश की राजधानी से लगभग १३० किलोमीटर दूर पश्चिमी उत्तर प्रदेश में ७ जिले, जिनमें सहारनपुर, मुजफ्फरनगर, मेरठ, बिजनौर, बरेली, रामपुर और मुरादाबाद में ४०.७०ः मुस्लिम आबादी निवास करती है जबकि पूरे उत्तर प्रदेश में १६.३१ः मुस्लिम हैं। बात यदि मुजफ्फर नगर जनपद की, की जाये तो यहाँ ४१.४२ः मुस्लिम जनता निवास करती है।[५] राजनीतिक दृष्टि से यह एक जमाने में चौधरी चरण सिंह का इलाका था। चौधरी चरण सिंह ने भूस्वामी जाटों और स्थानीय मुसलमानों, जिनमें अधिकांश भूमिहर मजदूर और दस्तकार थे, के बीच एक अच्छा सामाजिक ताना-बाना बुना था। अधिकांश लोगों का मानना था कि ‘‘चौधरी साहब सभी को समान रूप से साथ लेकर चलते थे।’’ लेकिन अगस्त २०१३ में यह ताना-बाना छिन्न-भिन्न हो गया। जाट और मुसलमान एक दूसरे के खून के प्यासे हो गये। इस इलाके में कई दिनों तक चले दंगों में ६२ लोगों की जान गई और लगभग ५०००० लोग विस्थापित हो गये।[६] चिन्ता की बात यह थी कि इस तरह के तनाव व धार्मिक उन्मादों से दूर रहने वाले ग्रामीण इलाके को भी इस दंगे ने चपेट में ले लिया।

अब प्रश्न यह उठता है कि क्या राजनीतिक दलों ने राजनीतिक लाभ के लिये हिंसा भड़काई? यह स्पष्ट तौर पर तो नहीं कहा जा सकता है, परन्तु इस तथ्य से भी इन्कार नहीं किया जा सकता है कि हत्याओं का बदला लेने और जाट बहू बेटियों के लिये न्याय की मांग के लिये आयोजित महापंचायत में भाजपा नेता भी मौजूद थे। जिन्होंने फेसबुक पर एक फर्जी वीडियो डाल दिया जिसमें एक हिन्दू लड़के की बुरी तरह पिटाई करते हुये दिखाया गया था। वीडियो डालने वाले विधायक एवं अन्य भाजपा नेता जिन पर हिंसा भड़काने के आरोप थे। उन्हें आगरा में नवम्बर मे ंआयोजित मोदी की रैली में पार्टी नेतृत्व द्वारा सम्मानित किया गया एवं उनमें से २ लोगों को टिकट भी दिया गया। दूसरी ओर बसपा के सांसद सहित बसपा, कांग्रेस एवं सपा के कई स्थानीय मुस्लिम नेताओं के भड़काऊ भाषणों वाले टेप सामने आ गये थे।[७] अतः साम्प्रदायिक दंगों का दोष किसी एक सम्प्रदाय या समुदाय पर मढ़ना उचित नहीं है। यह लाशों के ढेर पर वोटों की राजनीति करने वाले राजनीतिक वर्ग का दिवालियापन था।

२०१४ के लोकसभा चुनाव में एक साम्प्रदायिक मुद्दा राजनीतिक दलों को मिल चुका था। किसी भी नेता की प्रत्येक रैली में मुजफ्फरनगर का नाम प्रमुखता से लिया गया, चाहे रैली देश के किसी भी कोने में हो। ध्रुवीकरण की धार तेज करने को मुस्लिमों को राष्ट्रविरोधी एवं आई०एस०आई० का एजेण्ट बताकर विभाजन की रेखा खींच दी गई। इसके जबाव में मुस्लिम समुदाय से ‘‘इस्लाम खतरे में है’’ की आवाज उठने लगी। जिसके शोर में उदारवादी वर्ग की आवाज दब गयी एवं धर्मनिरपेक्ष लोग असहाय हो गये। २०१४ के चुनाव में भारतीय जनता पार्टी का नेतृत्व नरेन्द्र मोदी कर रहे थे जिनके ऊपर गुजरात दंगों के आरोप थे हालांकि उन दंगों में नरेन्द्र मोदी की स्पष्ट भूमिका सिद्ध नहीं हो पाई। इन दंगों के बाद नरेन्द्र मोदी कट्टर हिन्दुत्व के पोस्टर बॉय जरूर बन गये थे। इस चुनाव में हिन्दू वोटरों को उन से यह उम्मीद थी कि सत्ता में आने पर वह धारा ३७०, समान नागरिक संहिता, राममन्दिर निर्माण आदि हिन्दुत्व के मुद्दों पर कार्य करेगें। अक्सर चुनावों में धुवीकरण की स्थिति उत्पन्न होती है तो खासकर भाजपा को इसका फायदा मिलता है। कांग्रेस भी इस ध्रुवीकरण का फायदा उठाकर मुसलमानों के वोट प्राप्त करती रही है। इस चुनाव में हुई बड़ी हार के बाद, हार के कारणों की जांच करने के लिए गठित कमेटी के अध्यक्ष एवं वरिष्ठ कांग्रेस नेता ए०के० एंटनी ने धर्म निरपेक्षता के मामले पर पार्टी की नीतियों पर सवालिया निशान लगाये एवं उन्होंने कहा कि समाज के एक वर्ग को ऐसा लगने लगा है कि कांग्रेस केवल एक खास समुदाय को ही आगे बढ़ाने का काम करती है, अर्थात कांग्रेस की मुस्लिम तुष्टीकरण की राजनीति के कारण हार हुई।[८]

भाजपा की इस जीत में मुस्लिम राजनीति अहम है क्योंकि मुस्लिम मतदाताओं के विरोध ने हिन्दू मतदाताओं को मोदी और भाजपा का हमदर्द बना दिया। कांग्रेस अथवा अन्य विपक्षी दलों द्वारा मुस्लिम विरोध एवं साम्प्रदायिकता के मुद्दे पर भाजपा या मोदी को घेरने की जितनी कोशिश की गई, भाजपा के पक्ष में उतनी ही तेजी से हिन्दुत्व की लहर बनती चली गई। नरेन्द्र मोदी अब तक के सबसे खर्चीले और धुआँधार चुनाव प्रचार के दौरान भी बंग्लादेशी मुसलमानों को वापस भेजने और पिंक रिबॉल्यूशन का जिक्र करके संकेतों में ध्रुवीकरण को तेज और आक्रमक बनाने की कोशिश करते रहे।[९] नरेन्द्र मोदी के अतिरिक्त भाजपा के अन्य नेताओं द्वारा भी धार्मिक ध्रुवीकरण मजबूत करने हेतु कई विवादित बयान दिये गये। ऐसी स्थिति में यदि देश की १४ः मुस्लिम आबादी का ध्रुवीकरण भाजपा के खिलाफ होता भी तो क्या फर्क पड़ सकता था, क्योंकि देश के ८०ः हिन्दू मतदाताओं में से ५०ः मतदाताओं का ध्रुवीकरण होने पर इसी तरह के नतीजे की उम्मीद की जा सकती थी।

इस चुनाव में उम्मीद के मुताबिक लगभग हुआ भी यही। सीएसडीएस पोस्ट पोल सर्वे, २०१४ लोकसभा के आंकड़ों के अनुसार-गुजरात में भाजपा को ६३ प्रतिशत हिन्दू मतदाताओं के वोट मिलने पर पार्टी राज्य की सभी २६ सीटें जीत गई। मध्य प्रदेश में ५६ प्रतिशत हिन्दू मतदाताओं के पार्टी के पक्ष में आने पर राज्य में भाजपा २६ में २७ सीटें जीतने में कामयाब हो गई। राजस्थान में ५७ प्रतिशत हिन्दू मतदाताओं को अपने पक्ष में करके राज्य की सभी २५ सीटें प्राप्त कर लीं। महाराष्ट्र में भाजपा-शिवसेना गठबन्धन को हिन्दुओं के ५६ प्रतिशत मतों पर राज्य की ४८ में से ४२ सीटें प्राप्त हुई। झारखण्ड में भाजपा हिन्दुओं के ५२ प्रतिशत मत लेकर १४ में से १२ सीटें जीतने में कामयाब हो गई। दिल्ली में भी भाजपा ५१ प्रतिशत मतों के साथ सभी ७ सीटें जीतने में कामयाब हो गई। वहीं अच्छी खासी ३१ प्रतिशत मुस्लिम आबादी वाले

राज्य असम में भाजपा ५८ः हिन्दु मतदाताओं के वोट प्राप्त कर राज्य की १४ में से ७ सीटें जीतने में कामयाब हो गई। इन राज्यों में भाजपा ६०ः सफलता दर के साथ १६३ में से १४६ सीटें जीतने में कामयाब रही। उत्तर प्रदेश में चुनाव चतुष्कोणीय होने के कारण भाजपा गठबन्धन मात्र ४६ः हिन्दुओं के मत पाकर ८० में से ७३ सीटें जीत गई। छत्तीसगढ़ में भाजपा को ४६ः हिन्दू वोट मिले और वह ११ में से १० सीटें जीतने में कामयाब रही। कर्नाटक में ४५ः हिन्दू वोट पाकर २८ में से १७ सीटें जीती। बिहार में त्रिकोणीय मुकाबला होने के कारण मात्र ४५ः वोट पाकर पार्टी ४० में ३१ सीटें जीतने में कामयाब हुई। हरियाणा में ४३ः हिन्दुओं का वोट मिलने पर पार्टी १० में से ७ सीटें जीतने में कामयाब रही। आन्ध्रप्रदेश में भाजपा-टीडीपी गठबन्धन को लगभग ५० फीसदी वोट मिलने पर २५ में १७ सीटें मिली। इन राज्यों की १६४ सीटों में भाजपा ८०ः सफलता दर के साथ १५५ सीटें जीतने में कामयाब रही।[१०]

कुल मिलाकर पूरे देश में भाजपा को हिन्दुओं के औसतन ३६ः मत प्राप्त हुये लेकिन इन राज्यों में औसतन ५०ः हिन्दू मतदाताओं का रूझान भाजपा की ओर रहा। यहाँ एक और गौर करने वाला तथ्य है कि जहाँ भाजपा की सीधी टक्कर कांग्रेस से हुई वहाँ भाजपा को ज्यादा हिन्दुओं के वोट मिले और सफलता दर बहुत अच्छी रही। वहीं क्षेत्रीय पार्टियों से मुकाबला होने पर हिन्दुओं के कम वोट मिले जैसे-पश्चिम बंगाल, तमिलनाडु, उड़ीसा, तेलंगाना, केरल आदि परन्तु पंजाब में अकालियों से गठबन्धन एवं कांग्रेस से सीधी टक्कर होने के बाद भी भाजपा को अपेक्षित सफलता नहीं मिली। असल में भाजपा और नरेन्द्र मोदी देश की पहली पसन्द होने का कारण सिर्फ साम्प्रदायिकता का मुद्दा ही नहीं बल्कि कई राजनीतिक कारणों से था। इस चुनाव में धार्मिक ध्रुवीकरण का मुद्दा प्रभावी था, जिसने परिणामों पर निर्णायक प्रभाव डाला परन्तु भाजपा की प्रचण्ड जीत में यह इकलौता मुद्दा प्रभावी नहीं था। इसमें और भी कई अहम मुद्दे छिपे हुये थे।

सामान्य तौर पर भारत में साम्प्रदायिक सद्भाव को हमेशा चुनौती मिलती रहती है, परन्तु चुनाव नजदीक होने पर ये विराट रूप धारण कर लेती है। प्रथम आम चुनाव १६५१-५२ से लेकर २०१४ तक प्रत्येक चुनाव में साम्प्रदायिक सद्भाव को चुनौती दी जा रही है, लेकिन २०१४ का लोकसभा चुनाव इस बात की रक्तरंजित चेतावनी है कि सत्ता की भूख में लाशों की गिनती बेमानी है।

इन साम्प्रदायिक दंगों की कीमत सबसे ज्यादा मेहनतकश-मजदूर चुकाते हैं। ऐसे में मेहनतकश-मजदूरों का यह दायित्व बनता है कि वह अपनी वर्गीय एकता को मजबूत कर साम्प्रदायिकता और पूंजीवाद के विरूद्ध संघर्षों को तेज करें व साम्प्रदायिकता और फासीवाद के बढ़ते खतरे के खिलाफ एकजुट हों। क्योंकि साम्प्रदायिकता अब भारतीय राजनीति के केन्द्र में आ गई है तथा इसे परास्त करने की लड़ाई हमें आम जनता के साथ आम जनता के लिये चुनाव दर चुनाव लड़नी पड़ेगी। अतः धर्मनिरपेक्षता को हमें एक जनहित का प्रश्न बनाना होगा और जनचेतना जाग्रत करनी होगी। हमें इसे राजनीति के प्रत्येक मोर्चे पर हराने के लिये एकजुट होना चाहिये।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

१. कोठारी, रजनी. (२०१३). भारत में राजनीति (दूसरा संस्करण), दिल्ली : ओरियन्ट ब्लैक स्वॉन प्रा० लिमिटेड, पृष्ठ सं०-४६

२. साम्प्रदायिक आग में झुलसता देश. (गृह मंत्रालय की रिर्पोट) ीजजचरूध्ध्मदंहतपाण्बवउध्दमूेण्चीचघ्छत्र१४०५०११२०३

३. इन्डिया टुडे, २५ सितम्बर २०१३, पृष्ठ सं०-२१

४. उपरोक्त - पृष्ठ सं०-२१

५. इकबाल, मो० आसिफ. (३१ जनवरी २०१७) . उत्तर प्रदेश में साम्प्रदायिक घटनायें, विधानसभा चुनाव और मुसलमान ीजजचरूध्ध्ूण्चतंआंजंण्बवउ

६. सरदेशाई, राजदीप. (२०१५). २०१४ चुनाव जिसने भारत को बदल दिया, दिल्लीः प्रभात प्रकाशन, पृष्ठ सं०-१८०, १८१

७. सरदेशाई, राजदीप, उपरोक्त पृष्ठ सं० १८२-१८३

८. http://www.livehindustan.com/News/desh/National/article 1-a-k-antony-39-39-434662.html

९. सिंह, धर्मेन्द्र कुमार. (२०१५). ब्रान्ड मोदी का तिलिस्मः बदलाव की बानगी, नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन, पृष्ठ सं०-४६

१०. सिंह, धर्मेन्द्र कुमार, उपरोक्त, पृष्ठ सं०-४४-४६